अज्ञेय का संस्कृति चिंतन

प्रो. अखिलेश कुमार शंखधर
अध्यक्ष, हिंदी विभाग,
मणिपुर विश्वविद्यालय,
कांचीपुर, इंफाल – 795003 (मणिपुर)
एवं
सह अध्येता, भारतीय उच्च अध्ययन
संस्थान, शिमला – 171005

सांस्कृतिक अस्मिता, भारतीय आधुनिकता एवं मूल्यों – मानों को अपने चिंतन का केंद्रवर्ती प्रस्थान बिंदु बनाकर जिन विचारकों ने संस्कृति के विविध पक्षों पर लेखन कार्य किया है, अज्ञेय उनमें अग्रगण्य हैं | विचार और चिंतन के धरातल पर अज्ञेय ने अभिनव प्रतिमान स्थापित किए | अपने अनेक निबंधों में उन्होंने संस्कृति संबंधी चिंतन प्रस्तुत किया है | इन निबंधों में संस्कृति और परिस्थिति, संस्कृति की चेतना, सभ्यता का संकट, संस्कृतियाँ मूल्यों की सृष्टि करती हैं, प्राची-प्रतीची, काल का डमरू नाद, स्मृति और काल, स्मृति और देश, इतिहास और स्वातंत्र्य-बोध, जीवन के गुणाधार, रूढ़ि और मौलिकता, सौंदर्य-बोध और शिवत्व-बोध तथा साहित्य, संस्कृति और समाज परिवर्तन विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं | संस्कृति विषयक अज्ञेय के ये निबंध उनकी पुस्तकों – त्रिशंकु, आत्मनेपद, केंद्र और परिधि, सर्जना और संदर्भ, आत्मपरक, संवत्सर में संगृहीत हैं| इसके अतिरिक्त उनके अंतःप्रक्रियाओं के संकलनों – भवंती (1970), अंतरा(1974 ई), शाश्वती तथा शेषा में संस्कृति संबंधी स्फुट टिप्पणियाँ मिलती हैं | रघुवीर सहाय, रमेशचंद्रशाह, नंदकिशोर आचार्य, विद्यानिवास मिश्र और विश्वनाथ प्रसाद तिवारी को दिए गए अनेक साक्षात्कारों में भी अज्ञेय ने संस्कृति के विषय में अपने विचार व्यक्त किए हैं | परंपरा, आधुनिकता, भारतीयता, काल-चिंतन, जातीय स्मृति, स्वाधीनताबोध, मूल्य-चेतना और वैचारिक स्वराज आदि ऐसे बिंदु हैं जिन पर अज्ञेय विस्तारपूर्वक विचार करते हैं | अज्ञेय के संस्कृति - चिंतन की विशिष्टता को उजागर करते हुए उनके जीवनीकार डॉ. रामकमल राय लिखते हैं " अज्ञेय के व्यक्तित्व और कृतित्व को यदि एक परिचय सूत्र में व्यक्त करना हो तो उन्हें हम संस्कृति पुरुष कह सकते हैं | उनके जीवन की साधना वास्तव में संस्कृति की ही साधना है | अज्ञेय की संस्कृति- चेतना को हम तीन धरातलों पर देख सकते हैं, एक उनका चिंतन का धरातल, दूसरा उनका सृजन और तीसरा उनका जीवन | तीनों ही आयाम उनकी संस्कृति साधना के अत्यंत गहरे आयाम हैं | "1 इसी संदर्भ में अज्ञेय साहित्य के निष्ठावान अध्येता और प्रसिध्द समालोचक डॉ. रामस्वरूप चतुर्वेदी की पंक्तियाँ भी उल्लेखनीय हैं - " अज्ञेय के साहित्य चिंतन का अपना एक व्यवस्थित रूप है, जो एक रचनाकार के आख्यान-प्रत्याख्यान से अधिक एक संवेदनशील मस्तिष्क की सम्पृक्त विचार - पद्धति है, जिसके पक्ष और विपक्ष में तार्किक ढंग से सोचा जा सकता है, और जो रचना के भीतर तथा बाहर दोनों प्रदेशों को आलोकित करता है |

रचना और साहित्यचिंतन के बीच में अज्ञेय की कुछ वैसी ही स्थिति है जैसी आधुनिक अंग्रेजी साहित्य में टी.एस. इलियट की |'' 2

अज्ञेय का संस्कृति चिंतन बहुआयामी और संपूर्णता लिए हुए है | उनकी संस्कृति संबंधी अवधारणा मनुष्य के समग्र कर्म और उनके प्रभाव पर आधारित है | संस्कृति की अनेक परिभाषाएँ देते हुए वे लिखते हैं – ''एक परिभाषा वह है जो जन्म से लेकर मृत्यु तक मानव के समग्र कर्म और उसके तन-मन पर असर डालने वाले सब प्रभावों को संस्कृति के अधीन ले आती है | अर्थात जैविक या आनुवांशिक दाय के अतिरिक्त जो कुछ मानवप्राणी ग्रहण करता है वह सब का सब उसका संस्कार है और इसलिए उसे संस्कृति कहा जाना चाहिए; वह शिक्षा और परिवेश से मिलता है, जो स्वयं मानव समाज के कर्म के अधीन हैं, इसलिए उस सबको संस्कृति ही मानना चाहिए | एक दूसरी परिभाषा इतनी व्याप्ति से बचती हुई मानव के समग्र उद्यम को नहीं बल्कि केवल उसे निरूपित, निर्धारित और प्रेरित करने वाले मूल्यों के समूह को और समाज की मूल्यदृष्टि को संस्कृति की अभिधा देना चाहती है |''3 इस प्रकार यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि संस्कृति का स्वरूप व्यापक है और मनुष्य शिक्षा, समाज और परिवेश में रहकर जो कुछ भी अंगीकार करता है, वह सभी कुछ संस्कृति के अंतर्गत समाहित है | अज्ञेय ने जोर देकर यह बताया है कि जैविक या अनुवंशिक रूप से मिली हुई चीजों से इतर शेष सभी कुछ संस्कृति में अंतर्भुक्त है | 'संस्कृति की चेतना' विषयक निबंध में अज्ञेय संस्कृति को मूल्यदृष्टि से जोड़ते हुए लिखते हैं – ''संस्कृति मूलतः एक मूल्यदृष्टि और उससे निर्दिष्ट होने वाले निर्माता प्रभावों का नाम है- उन सभी निर्माता प्रभावों का जो समाज को, व्यक्ति को, परिवार को, सब के आपसी संबंधों को, श्रम और संपत्ति के विभाजन और उपयोग को, प्राणिमात्र से ही नहीं वस्तु मात्र से हमारे संबंधों को निरूपित और निर्धारित करते हैं | संस्कृतियाँ लगातार बदलती हैं क्योंकि मूल्य दृष्टि भी लगातार बदलती है, क्योंकि भौतिक परिस्थितियां भी लगातार बदलती हैं |''4

अज्ञेय ने परंपरा के प्रश्न पर भी अपने अनेक चिंतनपरक निबंधों में विचार किया है | उनका मानना है कि परंपरा को सायास अर्जित करना पड़ता है | परंपरा के प्रति लगाव या कहा जाए सम्मानभाव सुसंस्कृत व्यक्ति में ही होता है | परंपरा के संदर्भ में अज्ञेय लिखते हैं – '' ऐतिहासिक परंपरा कोई पोटली बांधकर रखा हुआ पाथेय नहीं है जिसे उठाकर हम चल निकलें | वह रस है जिसे हम बूंद-बूंद अपने में संचय करते हैं – या नहीं करते, कोरे रह जाते हैं |''5 निश्चय ही अज्ञेय कहना यह चाहते हैं कि परंपरा को दृढ़तापूर्वक और निष्ठा के साथ संजोना पड़ता है | परंपरा एक पीढ़ी दूसरी पीढ़ी में अंतरित ही इसीलिए होती है कि उसे पूर्ववर्ती समाज ने संजोकर रखा था | परंपरा को एक पंक्ति में परिभाषित करते हुए अज्ञेय लिखते हैं - '' वह वर्तमान के साथ अतीत की संबद्धता और तारतम्य का नाम है |''6 अतः यह कहा जा सकता है कि परंपरा का बहुत गहरा संबंध वर्तमान के साथ हैं | वर्तमान से कटकर परंपरा का कोई अर्थ नहीं रह जाता है | अज्ञेय परंपरा को ऐतिहासिक चेतना से जोड़ते हैं और उनका मानना है कि किसी भी रचनाकार में ऐतिहासिक चेतना का होना आवश्यक है | ऐतिहासिक चेतना को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं '' जो कालानुक्रम में बीत गया है, अतीत है,

उसके बीतेपन की ही नहीं, उसकी वर्तमानता की भी तीखी और जाग्रत अनुभूति | साहित्यकार के लिए आवश्यक है साहित्य में और जीवन में 'आसीत' का और ' अस्ति' का, जो अचिर हो गया है उसका जो 'चिर' है उसका, और इन दोनों की परस्परता, अन्योन्याश्रिता का , ज्ञान उसमें बना रहे | ''7 अज्ञेय यह यह मानते है कि ऐतिहासिक चेतना के निर्माण में अतीत और वर्तमान दोनों की भूमिका है | कोई भी रचनाकार जिसने अतीत और वर्तमान दोनों के अस्तित्व को भलीभांति समझ लिया है, निश्चय ही उसका सृजन मौलिकतापूर्ण और दृष्टिसम्पन्न होगा | अज्ञेय लिखते हैं '' अतीत और वर्तमान के इस दोहरे अस्तित्व की, उन की पृथक वर्तमानता की और उनकी एकसूत्रता की निरंतर अनुभूति ही ऐतिहासिक चेतना है, और इस चेतना का निरंतर स्पंदनशील विकास ही परंपरा का ज्ञान |''8 अतः यह कहा जा सकता है कि परंपरा के निर्माण और महत्ता का अभिज्ञान कराने में ऐतिहासिक चेतना की भी भूमिका है | अज्ञेय के साथ यह विडंबना रही है कि उन्हें कभी 'परंपरा - भंजक' माना गया तो कभी 'परंपरा- पोषक' | ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त करने के अवसर पर कलकत्ते में दिए गए अपने वक्तव्य में वे कहते हैं '' परंपरा हमारे कर्म का लक्ष्य नहीं, उसकी अनिवार्य भूमि है | सर्जनात्मक प्रतिभा जो अंकुर उपजाती है, उसका बीज वह परंपरा रूपी परती भूमि में ही डालती है | लेखक परंपरा तोड़ता है जैसे किसान भूमि तोड़ता है | मैंने अचेत या मुग्ध भाव से नहीं लिखा : जब परंपरा तोड़ी है तब यह जाना है कि परंपरा तोड़ने के मेरे निर्णय का प्रभाव आने वाली पीढ़ियों पर भी पड़ेगा | सर्जना का हर गीत परती तोड़ने का गीत होता है, पर उसमे स्तवन स्थूल मिट्टी का नहीं होता, उसकी उर्वरा शक्ति का होता है, उसमें फूटने वाले अंकुर का होता है | क्योंकि प्राण वही है |''9

भारतीय सांस्कृतिक चेतना का बिंब जिन प्रत्ययों से निर्मित हुआ है, उनमें से एक प्रमुख तत्त्व है काल संबंधी हमारा दृष्टिकोण | अज्ञेय काल -चिंतन की भारतीय धारणा को न केवल विकसित करते हैं वरन् उसे तार्किक और वैज्ञानिक रूप में हमारे समक्ष उजागर करते हैं | साहित्य अकादेमी की प्रतिष्ठित संवत्सर व्याख्यानमाला की शुरूआत अज्ञेय के व्याख्यानों से हुई थी जिसके अंतर्गत उन्होंने 'स्मृति और काल' और 'स्मृति और देश' विषयक दो व्याख्यान दिए थे | अज्ञेय ने अपने इन व्याख्यानों में काल -चिंतन की अवधारणा पर सूक्ष्मता के साथ विचार प्रस्तुत किया हैं | अपने बहुचर्चित निबंध ' काल का डमरू - नाद' में भी वे काल संबंधी अपना चिंतन प्रस्तुत करते हैं | काल -चिंतन की भारतीय दृष्टि पर प्रकाश डालते हुए अज्ञेय लिखते हैं '' काल एक सुदूर आरंभ -बिंदु से आरंभ करके एक अंत तक नहीं जाता; वह वर्तमान की चेतना से आरंभ होता है - वर्तमान के अद्यतन क्षण से; और उसकी गति दोनों ओर हो सकती है - अतीत की ओर अथवा भविष्य की ओर | फलतः काल के सभी क्षण सर्वदा वर्तमान हैं, सहकालिक हैं | ''10 स्पष्ट है कि अज्ञेय काल की आवर्ती अथवा चक्रवत धारणा में विश्वास रखते हैं | वस्तुतः भारतीय दृष्टि - काल गणना को सूर्य की गति से मापती है | अपनी अंतःप्रक्रियाओं के संकलन 'शाश्वती' में अज्ञेय 'दिक्र' और 'काल' की परस्परपूरकता को उजागर करते हुए लिखते हैं '' काल

को हम उसके अपने आयाम में केवल विषयीगत नाप से नाप सकते हैं - अनुभव की अर्थात स्मृति की नाप से | स्मृति के सहारे ही हम दिक् को काल और काल को दिक् में परिणत करते हैं, स्मृति के सहारे ही हम दिक्काल को एक वास्तविक सातत्य (या सतत सत्ता) देते हैं | यो स्मृति के बिना काल नहीं है, सातत्य नहीं है, कालक्रम नहीं है, सन्तानता नहीं है, प्रवाह नहीं है : केवल क्षण का समुत्पाद है |"11 इस प्रकार अज्ञेय यह मानते हैं कि काल -चेतना में स्मृति की बहुत गहरी भूमिका है | लेखक की सृजनशीलता में भी स्मृति सार्थक और महत्त्वपूर्ण हस्तक्षेप करती है | इसीलिए किसी भी प्रकार की सत्ता समृतियों को दबाने का प्रयास करती है | कभी कभी कुछ समय के लिए स्मृतियां दब जाती हैं, किंतु कालांतर में जब समाज में नवजागरण की चेतना का प्रसार होता है तो ये स्मृतियाँ प्रखर रूप में सामने आकर आमूलचूलकारी परिवर्तन में अपनी भूमिका अदा करती हैं | स्मृति की महत्ता को उजागर करते हुए अज्ञेय लिखते हैं " हमारी स्मृति के परिदृश्य उस बिंदु से बनते हैं जिस पर हम खड़े होते हैं | किसी भी देश का साहित्य उस देश के द्रष्टाओं द्वारा स्वीकृत और प्रतिष्ठापित परिदृश्यों को प्रस्तुत करता है - उनकी स्मृतियों का सर्जनात्मक संप्रेषण करता है | मैं तो स्वयं लेखक हूँ, लेखक होने ने नाते दूसरे लेखकों से यह माँग नहीं करता कि वे सामने आकर घोषित करें कि वे कहाँ खड़े हैं, जैसे कि मैं किसी दूसरे का यह अधिकार नहीं मानता कि वह मुझसे ऐसी माँग करे | लेकिन हम जो कुछ लिखते हैं, वह जिस तक पहुँचाना चाहते हैं, उस पर इस बात का प्रभाव अनिवार्यतया पड़ेगा कि हम कहाँ खड़े होकर, किस प्रकाश में रचना कर रहे हैं, वहाँ से स्मृति का कैसा परिदृश्य बनता है |" 12 निश्चय ही रचनाकार के अंतस में अनेक स्मृतियाँ संरक्षित रहती हैं और उचित अवसर आने पर वह अपनी उन्हीं अनूठी स्मृतियों को सर्जनात्मक रूप देकर पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत कर देता है | इसमें भी कोई संदेह नहीं कि प्रत्येक रचनाकार की कोई न कोई विचारधारा अवश्य होती है और स्मृति के रचनात्मक प्रस्तुतीकरण में उस दृष्टि या विचारधारा की अपनी भूमिका होती है | पौर्वात्य और पाश्चात्य संस्कृति चिंतन में काल - बोध की अवधारणा के अंतर को स्पष्ट करते हुए अज्ञेय लिखते हैं "यूरोपीय व्यक्ति क्षण में जीता है | अनंतकाल से उसे प्रयोजन नहीं है - इतना भी नहीं कि भूत और भविष्यत् का उपयोग वर्तमान जीवन को सम्पन्न्तर बनाने के लिए करे | भारतीय व्यक्ति अनंतकाल में रहता है | उसके लिए वर्तमान काल एक असुविधाजनक धारा है जो भूत और भविष्यत् को मिलाने वाले उसके बनाए हुए पुल के नीचे से बहती है |"13 भारतीय और पाश्चात्य दृष्टि के अंतर को अज्ञेय न केवल क्षण के आधार पर व्याख्यायित करते हैं वरन् पश्चिम के एकरेखीय कालबोध और भारत के चक्रावर्ती काल बोध को भी सूक्ष्मता के साथ स्पष्ट करते हैं | अज्ञेय के काल-चिंतन की विशिष्टता पर प्रकाश डालते हुए डॉ. रमेश ऋषिकल्प उचित ही लिखते हैं "अज्ञेय के काल-चिंतन में हमें कालबद्धता दिखाई देती है | वह क्षण को स्मरण के माध्यम से नहीं जीना चाहते, वह उसे वर्तमान के क्षण के रूप में जीना चाहते हैं और जीते भी हैं | वह स्पष्ट तौर से मानते हैं कि काल पर विजय स्मृति के माध्यम से नहीं, केवल शुद्ध वर्तमान के आत्म

साक्षात्कार में ही हो सकती है क्योंकि अतीत की स्मृतियाँ, आकांक्षाएँ अपना अस्तित्व वर्तमान में समाहित कर देती हैं | भविष्य का अस्तित्व उतना ही है जितना वह आशाओं और संभावनाओं को वर्तमान की अजस्र धारा में प्रवाहित करता है |'' 14 अतः यह कहा जा सकता है कि अज्ञेय का काल -चिंतन भारतीय संस्कृति की विशिष्टता और महत्ता को उजागर करता है |

अज्ञेय के संस्कृति - चिंतन का महत्त्व इस दृष्टि से बढ़ जाता है कि उन्होंने भारतीयता और भारतीय आधुनिकता तथा स्वातंत्र्य चेतना आदि बिंदुओं पर अपने अनेक वैचारिक निबंधों में विस्तारपूर्वक विचार व्यक्त किया है | अज्ञेय 'निरंतर संस्कारवान होने की प्रक्रिया' को ही आधुनिकता मानते हैं | उनकी दृष्टि में वही संस्कृति श्रेष्ठ है जो निरंतर अपने को संस्कारित और परिमार्जित करती रहती है | अज्ञेय यह मानते हैं कि आधुनिक होना वस्तुतः युगीन या समकालीन होना है | आधुनिकता को परिभाषित करते हुए वे लिखते हैं - '' आधुनिकता काल के साथ नए प्रकार का संबंध है या होना चाहिए | आधुनिकता मूलतः एक नए ढंग का कालबोध है और हमारे संवेदन का उस पर आधारित रूपांतर बड़े दूरव्यापी परिणाम रखता है | '' 15 अतः यह कहा जा सकता है कि अज्ञेय आधुनिकता को गहरे स्तर पर काल से संबध्द मानते हैं और बदली हुई संवेदनात्मक दृष्टि को उसका प्रमुख अभिलक्षण मानते हैं | आधुनिकता और आधुनिकीकरण के विभेद को स्पष्ट करते हुए अज्ञेय लिखते हैं '' साधारण व्यक्ति - पढ़ा लिखा व्यक्ति भी प्रायः यह भूल कर बैठता है कि आधुनिकता, जो कि एक दृष्टि है, संवेदन का एक संस्कार है, और आधुनिकीकरण, जोकि समाज का अथवा आर्थिक संस्थान का बाहरी रूपांतरण है, दोनों का पर्यायवाची मान लेता है | '' 16 इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि अज्ञेय आधुनिकता को आतंरिक और आधुनिकीकरण को बाह्य मानते है | अज्ञेय यह भी मानते हैं कि आधुनिकता आधुनिकीकरण, शहरीकरण, यांत्रिकीकरण और पश्चिमीकरण इन सबसे बिलकुल अलग है | वे लिखते है '' यह बिल्कुल संभव है कि बाहर से हम पूरी तरह शहरी साहब हो जाएँ, हर आधुनिक यांत्रिककरण उपकरण घर में लगा लें और फिर इस आधुनिकीकरण, शहरीकरण, यांत्रिकीकरण और पश्चिमीकरण के बाद भी हमारा संवेदन और हमारी दृष्टि घोर रूप से अनाधुनिक रह जाए - चेतना के स्तर पर हम किसी प्राचीनकाल में ही जीते रहें |'' 17 निश्चय ही यह कहा जा सकता है कि पश्चिमीकरण आधुनिकीकरण नहीं है | इस तरह अज्ञेय भारतीय आधुनिकता के स्वरूप को उजागर करते हैं |

अज्ञेय ने भारतीयता के प्रश्न पर भी अपने अनेक वैचारिक निबंधों में विचार व्यक्त किया है | प्रसिद्ध कवि-आलोचक नंदकिशोर आचार्य को दिए गए एक साक्षात्कार में वे कहते हैं '' भारतीयता का मतलब है भारतीय अस्मिता की पहचान - व्यक्ति के सामने एक आत्मबिंब हो जो कि भारतीय हो | लेकिन यह भी है कि उसको एक सीढ़ी में एक स्थान पर मैं रख देना चाहूँगा क्योंकि भारतीय हो जाने के नाते ऐसा नहीं है कि मनुष्य-मनुष्य नहीं रहेगा | तो एक शर्त यह रहेगी कि एक मानव के नाते मैं क्या हूँ, कहाँ हूँ - मानवता की एक पहचान होनी

चाहिए |" 18 अज्ञेय यह तो मानते हैं कि भारतीय चित्त और मानस सर्वथा अलग होता है, फिर भी वे स्मरण कराना नहीं भूलते कि मानवता सर्वोपरि है | अपनी चर्चित कृति 'आत्मनेपद' में भारतीयता को और अधिक स्पष्ट करते हुए अज्ञेय लिखते हैं " भारतीयता का पहला लक्षण या गुण है सनातन की भावना, काल की भावना, काल के आदि -हीन अंत -हीन प्रवाह की भावना और काल केवल वैज्ञानिक दृष्टि से क्षणों की सरणी नहीं, काल हम से, भारतीय जाति से संबध्द विशिष्ट और निजी क्षणों की सरणी के रूप में |" 19 इस प्रकार अज्ञेय भारतीय दृष्टि की विशिष्टता और उसकी महत्ता को उजागर करते हैं | अज्ञेय की इसी चिंतन दृष्टि की महत्ता को प्रकाशित करते हुए प्रो. राजेंद्र प्रसाद पाण्डेय उचित ही लिखते हैं - " अज्ञेय ने भारतीयता, जातीय स्मृति और दिक् तथा काल पर विस्तृत विचार किया है | इन विचारों से साहित्यिक मान्यताओं की भी निर्मिति हुई है | पहले भारतीयता को ही लें | अज्ञेय भारतीयता से व्याकुल साहित्यकार नहीं हैं, न ही उसको लेकर उनके मन में कोई भावुकतापूर्ण आकर्षण है | उसका आलोचनात्मक ढंग से विवेचन करते हैं तथा भारतीयता और भारतीय संस्कृति संबंधी धारणा की भ्रांति को भी दूर करने का प्रयास करते हुए उसका एक सही और स्पष्ट चित्र प्रस्तुत करने का प्रयास करते हैं |" 20 वस्तुतः अज्ञेय एक ऐसे रचनाकार थे जिन्होंने निरंतर भारतीय मानो - मूल्यों को दृष्टि में रखते हुए लेखन कार्य किया है | अज्ञेय का संपूर्ण वैचारिक लेखन भारतीय दृष्टि से संवलित है और पश्चिम का अनुकरण वहाँ बिलकुल भी नहीं है | हिंदी आलोचना जगत् में यह भ्रम फैला हुआ है कि अज्ञेय पर अंग्रेजी के प्रसिध्द कवि-आलोचक टी.एस.एलियट का बहुत गहरा प्रभाव है | यहाँ इस तथ्य की अनदेखी की जाती है कि अज्ञेय ने भले ही एलियट के निबंध 'ट्रेडिशन एण्ड इनडिविजुअल टैलेंट' का 'रूढ़ि और मौलिकता' शीर्षक से अनुवाद किया फिर भी संस्कृति -चिंतन और स्वातंत्र्यचेतना आदि अनेक बिंदुओं पर वे एलियट से अलग दृष्टिकोण रखते हैं |

अज्ञेय के संस्कृति - चिंतन का महत्त्व इस दृष्टि से बढ़ जाता है कि उन्होंने स्वाधीनता की चेतना को किसी भी संस्कृति का सर्वप्रमुख गुण माना है | अज्ञेय का स्वयं का व्यक्तित्व भी स्वातंत्र्यचेता था | इस संदर्भ में प्रतिष्ठित कवि- आलोचक डॉ. रमेशचंद्र शाह की पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं " अज्ञेय का जीवन -दर्शन, अज्ञेय के व्यक्तित्व और कृतित्व की 'मूल अभीत्सा और जीवनव्यापी खोज क्या है ? वह क्या है जो उसके विद्रोह और उसकी आस्था का भी आधार और सृजनशीलता को भी उत्प्रेरित करने वाली चीज है ? निश्चय ही वह स्वातंत्र्य की ही अभीप्सा है, स्वाधीनता की ही खोज है : स्वाधीनता जो निरंतर आविष्कार, शोध और संघर्ष मांगती है |"21 रमेशचंद्र शाह का यह कथन अज्ञेय के सर्वांगीण व्यक्तित्व का निदर्शन है | अज्ञेय किसी भी समाज अथवा व्यक्ति के विकास के लिए स्वाधीनता को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कारक मानते हैं | स्वाधीनता को परिभाषित करते हुए वे लिखते हैं " स्वाधीन होना अपनी चरम संभावनाओं की संपूर्ण उपलब्धि के शिखर तक विकसित होना है |" 22 अज्ञेय के कहने का आशय यह है कि स्वाधीनता हमे उन्मुक्त विकास का अवसर प्रदान करती है तथा सफलता के शीर्ष पर स्थापित करती है | अज्ञेय

स्वाधीनता को बहुत बड़ा मूल्य मानते हैं | उनकी पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं " स्वाधीनता के योध्दा को सबसे पहले एक करुणासम्पन्न स्वाधीनकर्मी होना होगा, जो दूसरे की स्वाधीनता के लिए अपनी स्वाधीनता का बलिदान करने को सदैव प्रस्तुत है | स्वाधीनता की सच्ची कसौटी 'मैं' नहीं 'ममेतर' है | " 23 इस प्रकार अज्ञेय का स्वातंत्र्य - दर्शन 'आत्म' के स्थान पर 'अन्य' को अधिक महत्त्व देता है |

अज्ञेय का संस्कृति चिंतन एकायामी न होकर समग्र दृष्टि को केंद्र में रखता है | अज्ञेय किसी भी प्रकार की संकीर्णता को स्वीकार नहीं करते हैं और मूल्यहीनता को किसी भी राष्ट्र अथवा समाज के पिछड़े होने का प्रमुख कारण मानते हैं | मनुष्य मात्र को वे मूल्यों का स्रष्टा और नए प्रतीकों का सृजनकर्ता मानते हैं | सांस्कृतिक विकास की धुरी वे व्यक्ति के विकास को मानते हैं | उनकी पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं " संस्कृति और व्यक्ति स्वातंत्र्य का गहरा और अनिवार्य संबंध है | यह भी कहा जा सकता है कि सांस्कृतिक विकास व्यक्ति स्वातंत्र्य का ही विकास है, अथवा व्यक्ति स्वातंत्र्य का विकास ही सांस्कृतिक विकास की कसौटी है | "24 इस प्रकार अज्ञेय संस्कृति को व्यक्ति की स्वाधीन चेतना से जोड़ते हैं | संस्कृति व्यक्तित्व का विस्तार करती है | अज्ञेय लिखते हैं " संस्कृति व्यक्तित्व का विस्तार और प्रसार माँगती है, संकोच या छंटाव नहीं | संस्कारी व्यक्ति बराबर नयी उपलब्धियों को आत्मसात करता चलता है | संस्कृत व्यक्ति की आत्म - सज्जा या अलंकृति किसी व्यक्ति या वस्तु के मुकाबिले में, उस के विरुध्द, उभर कर आने के लिए नहीं होती - जैसे घर या बैठक की सजावट, या मित्र- मण्डली या प्रेमी, बल्कि वह उन्हें अपने में घेर लेती है |" 25 हम यह कह सकते हैं कि जिसप्रकार अज्ञेय उन्मुक्त और आकाशधर्मी व्यक्तित्व वाले थे, उनका संस्कृति संबंधी दृष्टिकोण भी उसी प्रकार समग्र और बहुआयामिता लिए हुए है |

संदर्भ संकेत

1. रामकमल राय, अज्ञेय के साहित्य में मनुष्य की नियति, भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान, शिमला, प्रथम संस्करण 2014 ई, पृष्ठ 105
2. रामस्वरूप चतुर्वेदी, अज्ञेय और आधुनिक रचना की समस्या, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, चौथा संस्करण 2000 ई., पृष्ठ 111
3. अज्ञेय, केंद्र और परिधि, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2005 ई., पृष्ठ 275 - 276
4. अज्ञेय, केंद्र और परिधि, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2005 ई., पृष्ठ 273

5. नंदकिशोर आचार्य (चयन एवं संपादन), अज्ञेय के उद्धरण, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2019 ई, पृष्ठ 15
6. अज्ञेय, सर्जना और संदर्भ, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1985 ई., पृष्ठ 31
7. अज्ञेय, सर्जना और संदर्भ, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1985 ई., पृष्ठ 21
8. अज्ञेय, सर्जना और संदर्भ, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1985 ई., सर्जना और संदर्भ, पृष्ठ 21 - 22
9. कृष्णदत्त, पालीवाल (सं.), सच्चिदानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' के अभिभाषण, भाग - एक, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली, संस्करण 2012 ई., पृष्ठ 129
10. अज्ञेय, सर्जना और संदर्भ, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1985 ई., पृष्ठ 270
11. अज्ञेय, शाश्वती,राजपाल एण्ड सन्ज, दिल्ली, संस्करण 1993 ई., पृष्ठ 71
12. कृष्णदत्त, पालीवाल (सं.), सच्चिदानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' के अभिभाषण, भाग - एक, सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली, संस्करण 2012 ई., पृष्ठ 325 - 326
13. नंदकिशोर आचार्य (सं.), खुले में खड़ा पेड़, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, प्रथम संस्करण 1999 ई., पृष्ठ 176
14. रमेश ऋषिकल्प, अज्ञेय का चिंतन, मेधा बुक्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2011 ई., पृष्ठ 87 - 88
15. अज्ञेय, केंद्र और परिधि, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2005 ई., पृष्ठ 302
16. अज्ञेय, केंद्र और परिधि, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2005 ई., पृष्ठ 303
17. अज्ञेय, केंद्र और परिधि, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2005 ई.,पृष्ठ 303
18. कृष्णदत्त पालीवाल (सं.), अज्ञेय से साक्षात्कार, आर्य प्रकाशन मंडल, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2010 ई., पृष्ठ 51
19. अज्ञेय, आत्मनेपद, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, पुनर्नवा, संस्करण 2003 ई., पृष्ठ 77
20. राजेंद्र प्रसाद पाण्डेय, अज्ञेय की आलोचना दृष्टि, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2011 ई., पृष्ठ 57
21. रमेश चंद्र शाह, अज्ञेय वागर्थ का वैभव, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1995 ई., पृष्ठ 96

22. अज्ञेय, केंद्र और परिधि, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2005 ई., पृष्ठ 99
23. अज्ञेय, केंद्र और परिधि, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2005 ई., पृष्ठ 100
24. अज्ञेय, केंद्र और परिधि, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2005 ई., पृष्ठ 42
25. नंदकिशोर आचार्य (सं.), खुले में खड़ा पेड़, वाग्देवी प्रकाशन, बीकानेर, प्रथम संस्करण 1999 ई., पृष्ठ 174 - 175